57

ISSN 2349-3887

दोआबा

समय से संगत

‘ डॉ. बुल्के ने अपने को भारतीय जीवन और संस्कृति से इस तरह एकाकार कर लिया था कि वे भारतीयों से अधिक भारतीय बन गए थे। इस देश ने उन्हें जिस आत्मीयता और उदारता से अंगीकार किया था, उससे वे अभिभूत थे। एक अवसर पर उन्होंने कहा था ‘भगवान के प्रति धन्यवाद, जिसने मुझे भारत भेजा है और भारत के प्रति धन्यवाद, जिसने मुझे इतने प्रेम से अपनाया है। ’

मां के शब्द
फ़ादर बुल्के के नाम

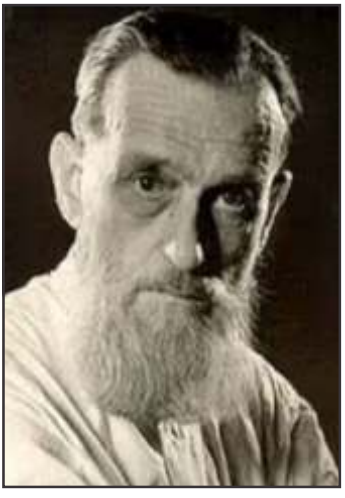

01 सितम्बर, 1909 — 17 अगस्त, 1982

प्रिय कामिल,

रोबेर्ट आज घर आया है ताकि वह मुझे सांत्वना दे सके। कामिल, विश्वास रखना कि मैं रोई – बहुत रोई – जब तुम चले गए। बात ऐसी नहीं थी कि मैं इसका विरोध करना चाहती थी कि तुम अपने बुलावे के अनुसार चले गए। बात ऐसी बिल्कुल नहीं, क्योंकि मुझे तुम पर बहुत गौरव है पर मैं तो माता हृदय हूं, और मैंने हमेशा सम्पूर्ण आत्मा से तुम्हें प्यार किया और इसी कारण से विदाई और अधिक दुखद हुई। बेटा, विश्वास रखना कि यदि मैं रोती हूं तो वह इसलिए नहीं कि मैं सुखी नहीं हूं। मैं ईश्वर को धन्यवाद देती हूं कि उसने मुझे ऐसी सन्तान दी और मैं तुम्हारे लिए बहुत प्रार्थना करूंगी, जिससे तुम सुदूर भारत में बहुत भलाई कर सको और इसलिए भी कि तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक रहे।

अब मुझको वहां की पूरी ख़बर लिखना। तुमको क्या खाना मिलता है? कहां रहते हो? और तुमको कौन-सा काम करना पड़ता है? तुम जानते हो कि मां इन सब बातों में रुचि रखती है। तुम्हारे पिताजी रसोईघर में बैठे हुए अपना अख़बार पढ़ रहे हैं और वे बहुत-बहुत नमस्कार कहते हैं। तुम्हारी बहन एक किताब पढ़ने में व्यस्त है। अभी साढ़े सात बज रहे हैं शाम के। और अभी ख़बरें सुननी हैं। मैं फिर सुनूंगी जैसा कि मैं करती रही जब तुम समुद्र में यात्रा करते रहे, कि कहीं कोई जहाज़ तो नहीं डूबा।

अब पत्रान्त करती हूं, आशीर्वाद देती हूं, और तुम्हारी दृढ़ता की शुभकामना करती हूं।

तुम्हारी मां, जो तुमको नहीं भूलती

'संन्यासी के नाम पत्र' से

जुलाई-सितम्बर 2026

दोआबा

समय से संगत

दोआबा

समय से संगत

जुलाई-सितम्बर 2026
वर्ष 20 : अंक 57

***संपादक* : जाबिर हुसेन**
मो.-09431602575

रेखांकन : अनुप्रिया

मानद सहयोग

लता प्रासर, पवन कुमार, जावेद एक़बाल

प्रबंध

सुबूही हुसेन, मोनिश हुसेन

कार्यालय सहयोग : सुनील हेम्ब्रम, विक्रम मरांडी

संपर्क
247 एम आई जी
लोहियानगर, पटना - 800 020
e-mail : doabapatna@gmail.com
मो.-08207535094

सर्वाधिकार सुरक्षित

पाकीज़ा ऑफसेट
शाहगंज, पटना-800 006
मो.-09334116542

मूल्य : ₹ 200/-

रचनाओं में अभिव्यक्त विचार रचनाकारों के अपने हैं।
संपादक का इन विचारों से सहमत होना ज़रूरी नहीं।

जुलाई-सितम्बर 2026

दोआबा

समय से संगत

अनुक्रम

जाबिर हुसेन : अपनी बात / 05

जिन्हें भूलना कठिन

दिनेश्वर प्रसाद : बुल्के और पोनेट्टे / 08
नीला प्रसाद : फ़ादर बुल्के, हम और ये चिट्ठियां / 15
कमलेश भट्ट कमल : फ़ादर बुल्के - जीवन के आर-पार झांकते पत्र / 23
सुरेंद्र बांसल : पर्यावरण का अनुपम आदमी / 31
कविता : बशीर बद्र - तुम्हारे साथ इक लम्हा बहुत है / 34
परिचय दास : बशीर बद्र - धीमी रोशनी का शायर / 41

रचना-समय

निधि अग्रवाल : प्राचीनतम जनजाति के सान्निध्य में / 46
अंशु सिंह : क़ुदरत का नूर - सिक्किम / 49
रजनी शर्मा : दागी रंगरेज़न / 59
गोपाल माथुर : स्वयं को पहचानते हुए / 76
यशोधरा भटनागर : हथेलियों में बसी दरारें / 85
विनोद रिंगानियां : स्वर्णपंखी / 90
रास बिहारी गौड़ : शब्दों से छिटके अर्थ / 105
नीरजा हेमेन्द्र : रिंगटोन / 114

राजेन्द्र दानी : अकही सलाह / 123
शीतेंद्र नाथ चौधुरी : शेरूभाई की बारात / 127
पवन शर्मा : दीमक / 133
सत्य शुचि : मां के हिस्से / 138
मार्टिन जॉन : सबसे बड़ी खुशी / 139

कविता-समय

सुरेंद्र बांसल / 141
पूनम सिंह / 142
किरण अग्रवाल / 146
रानी श्रीवास्तव / 150
चारुमित्रा / 152
राजेन्द्र नागदेव / 157
मनोज मोहन / 160
लक्ष्मीकांत मुकुल / 163
जयप्रकाश मानस / 167
ललन चतुर्वेदी / 169
कैलाश केशरी / 172

मूल्यांकन

शहंशाह आलम : उद्‌भ्रांत की आत्मकथा 'काली रात का मुसाफ़िर' / 180
बली सिंह : संस्थाओं और समूहों के उत्पीड़न से जूझता कवि / 184
शैलेन्द्र चौहान : शंभु बादल - जनजीवन की संवेदना और
प्रतिरोध के प्रतिबद्ध कवि / 193
प्रज्ञा गुप्ता : एक कविता हमेशा दर्ज करेगी तुम्हारा होना / 197
नदी का मर्सिया तो पानी ही गाएगा (केशव तिवारी)

दोआबा-56 (अप्रैल-जून, 2026)

हरियश राय / Aabid Surti / 206
अवध बिहारी पाठक / कुमार प्रशांत / 207
प्रभा मजुमदार / 208
शहंशाह आलम / 209
अनुज कुमार / 210
सत्यप्रकाश असीम / 212
जयप्रकाश मानस / कैलाश केशरी / राजेश कुमार मिश्र / 213

□□

जाबिर हुसेन

दोआबा का यह अंक

दोआबा के इस अंक ने मुझे हफ़्तों परेशान किया। कुछ तो आंखों की तकलीफ़ और कुछ पुरानी यादों की तपिश। दोनों ने मिलकर मेरी रातों की नींद और दिन के आराम से मुझे वंचित रखा। अंतिम प्रूफ पर नज़र रखना भी मेरे लिए दुश्कर-सा हो गया था। इन व्याधियों से निजात मिली तो कुछ और परेशानियों ने आ घेरा। कई बार तो नकारात्मक विचार इतने प्रभावी हो गए कि मुझे पत्रिका का प्रकाशन बंद कर देने तक का निर्णय लेने की नौबत आ गई। इसी बीच, अपने एक वरिष्ठ संपादक मित्र राजेंद्र राजन जी ने 'इरावती' का प्रकाशन बंद करने की सूचना देकर गंभीर रूप से चौंका दिया। अपने संपादकीय आलेख में उन्होंने निजी अनुभवों से उपजी पीड़ा का ज़िक्र करके मुझे कुछ और निराश कर दिया।

अपने पाठकों की उदासीनता और हम जिसे अपना साहित्य-समाज मानते हैं, उसकी ख़ामोशी ने भी हालात की संगीनी को बढ़ा दिया। उन्हें अपनी तकलीफ़ें बताकर और रंजीदा करना एक जुर्म-जैसा महसूस हुआ। मैंने फोन पर अपने दिल की बात तो कह दी, पर उन्हें कोई सलाह नहीं दे पाया। सलाह देता भी तो किन शब्दों में, किन वाक्यों में! अपने संपादन में राजन जी ने जिन 25 अंकों का प्रकाशन किया, वो अपनी संयोजन-कला के कारण पाठकों की पसंद पर खरे जरूर उतरे हैं, लोकप्रिय भी रहे हैं। मैं तो 'इरावती' का नियमित पाठक और प्रशंसक रहा हूं। मैं इसका प्रकाशन रुकने की 'वारदात' से दुखी हूं। मेरा यह साहस नहीं कि अपने मित्र को पत्रिका का प्रकाशन दोबारा शुरू करने की नसीहत दे सकूं।